

अनाथ

गांव की किसी एक अभागिनी के अत्याचारी पति के तिरस्कृत कर्मों की पूरी व्याख्या करने के बाद पड़ोसिन तारामती ने अपनी राय संक्षेप में प्रकट करते हुए कहा- "आग लगे ऐसे पति के मुंह में।"

सुनकर जयगोपाल बाबू की पत्नी शशिकला को बहुत बुरा लगा और ठेस भी पहुंची। उसने जबान से तो कुछ नहीं कहा, पर अन्दर-ही-अन्दर सोचने लगी कि पति जाति के मुख में सिगरेट सिगार की आग के सिवा और किसी तरह की आग लगाना या कल्पना करना कम-से-कम नारी जाति के लिए कभी किसी भी अवस्था में शोभा नहीं देता?

शशिकला को गुम-सुम बैठा देखकर कठोर हृदय तारामती का उत्साह दूना हो गया, वह बोली- "ऐसे खसम से तो जन्म-जन्म की रांड भली।" और चटपट वहां से उठकर चल दी, उसके जाते ही बैठक समाप्त हो गई।

शशिकला गम्भीर हो गई। वह सोचने लगी, पति की ओर से किसी दोष की वह कल्पना भी नहीं कर सकती, जिससे उनके प्रति ऐसा कठोर भाव जागृत हो जाएं। विचारते-विचारते उसके

कोमल हृदय का सारा प्रतिफल अपने प्रवासी पति की ओर उच्छ्वासित होकर दौड़ने लगा। पर जहां उसके पति शयन किया करते थे, उस स्थान पर दोनों बांहें फैलाकर वह औंधी पड़ी रही और बारम्बार तकिए को छाती से लगाकर चूमने लगी, तकिए में पति के सिर के तेल की सुगन्ध को वह महसूस करने लगी और फिर द्वार बन्द करके बक्स में से पति का एक बहुत पुराना चित्र और स्मृति-पत्र निकालकर बैठ गई। उस दिन की निस्तब्ध दोपहरी, उसकी इसी प्रकार कमरे में एकान्त-चिन्ता, पुरानी स्मृति और व्यथा के आंसुओं में बीत गई।

शशिकला और जयगोपाल बाबू का दाम्पत्य जीवन कोई नया हो, सो बात नहीं है। बचपन में शादी हुई थी और इस दौरान में कई बाल-बच्चे भी हो चुके थे। दोनों ने बहुत दिनों तक एक साथ रहकर साधारण रूप में दिन काटे। किसी भी ओर से इन दोनों के अपरिमित स्नेह को देखने कभी कोई नहीं आया? लगभग सोलह वर्ष की एक लम्बी अवधि बिताने के बाद उसके पति को महज काम-धाम ढूंढ़ने के लिए अचानक परदेश जाना पड़ा और विच्छेद ने शशि के मन में एक प्रकार का प्रेम का तूफान खड़ा कर दिया। विरह-बंधन में जितनी खिंचाई होने लगी, कोमल हृदय की फांसी उतनी ही कड़ी होने लगी। इस ढीली अवस्था में जब उसका अस्तित्व भी मालूम नहीं पड़ा, तब उसकी पीड़ा अन्दर से टीसों मारने लगी। इसी से, इतने दिन बाद, इतनी आयु में बच्चों की मां बनकर शशिकला आज बसन्त की दुपहरिया में निर्जन घर में विरह-शैया पर पड़ी नव-वधू का-सा सुख-स्वप्न देखने लगी। जो स्नेह अज्ञात रूप जीवन के आगे से बहा चला

गया है सहसा आज उसी के भीतर जागकर मन-ही-मन बहाव से विपरीत तैरकर पीछे की ओर बहुत दूर पहुंचना चाहती है। जहां स्वर्णपुरी में कुंज वनों की भरमार है, और स्नेह की उन्माद अवस्था किन्तु उस अतीत के स्वर्णिम सुख में पहुंचने का अब उपाय क्या है? फिर स्थान कहां है? सोचने लगी, अबकी बार जो वह पति को पास पाएगी तब जीवन की इन शेष घड़ियों को और बसन्त की आभा भी निष्फल नहीं होने देगी। कितने ही दिवस, कितनी ही बार उसने छोटी-मोटी बातों पर वाद-विवाद करके इतना ही नहीं, उन बातों पर कलह कर-करके पति को परेशान कर डाला है। आज अतृप्त मन ने भी एकान्त इच्छा से संकल्प किया कि भविष्य में कदापि संघर्ष न करेगी, कभी भी उनकी इच्छा के विरुद्ध नहीं चलेगी, उनकी आज्ञा को पूरी तरह पालेगी, सब काम उनकी तबीयत के अनुसार किया करेगी, स्नेह-युक्त विनम्र हृदय से अपने पति का बुरा-भला व्यवहार सब चुपचाप सह लिया करेगी; कारण पति सर्वस्व है, पति प्रियतम है, पति देवता है।

बहुत दिनों तक शशिकला अपने माता-पिता की एकमात्र लाडली बेटी रही है। उन दिनों जयगोपाल बाबू वास्तव में मामूली नौकरी किया करते थे, फिर भी भविष्य के लिए उसे किसी प्रकार की चिन्ता न थी। गांव में जाकर पूर्ण वैभव के साथ रहने के लिए उसके श्वसुर के पास पर्याप्त मात्रा में चल-अचल संपत्ति थी।

इसी बीच, बिल्कुल ही असमय में शशिकला के वृद्ध पिता कालीप्रसन्न के यहां पुत्र ने जन्म लिया। सत्य कहने में क्या है? भाई के इस जन्म से शशिकला को बहुत दुःख हुआ और जयगोपाल बाबू भी इस नन्हे साले को पाकर विशेष प्रसन्न नहीं हुए।

अधिक आयु में बच्चा होने के कारण उस पर माता-पिता के लाड़-प्यार का कोई ठिकाना न रहा। उस नवजात छोटे दूध-पीते निद्रातुर साले ने अपनी अज्ञानता में न जाने कैसे अपने कोमल हाथों की छोटी-छोटी मुठ्ठियों में जयगोपाल बाबू की सारी आशाएं पीसकर जब चकनाचूर कर दीं तब वह आसाम के किसी छोटे बगीचे में नौकरी करने के लिए चल दिया?

सबने कहा सुना कि पास में ही कहीं छोटा-मोटा काम-धन्धा खोज करके यहीं रहो तो अच्छा हो, किन्तु चाहे गुस्से के कारण से हो या गैरों की नौकरी करने में शीघ्र ही अमीर बनने की धुन से हो, उसने किसी की बात पर ध्यान नहीं दिया। शशि को बच्चों के साथ उसके मायके में छोड़कर वह आसाम चला गया। विवाह के उपरान्त इस दम्पति में यह पहला विच्छेद था।

पति के चले जाने से, शशि को दुधमुंहे भाई पर बड़ा क्रोध आया। जो मन की पीड़ा को स्पष्ट रूप में कह नहीं सकता, उसी को क्रोध अधिक आता है। छोटा-सा नवजात शिशु मां के स्तनों को

चूमता और आंख मींचकर निश्चिन्तता से सोता, और उसकी बड़ी बहन अपने बच्चों के लिए गर्म दूध, ठण्डा भात स्कूल जाने की देर इत्यादि अनेक कारणों से रात-दिन रूठकर मुंह फुलाये रहती और सारे परिवार को परेशान करती।

थोड़े दिन बाद ही बच्चे की मां का स्वर्गवास हो गया। मरते समय मां अपने गोद के बच्चे को लड़की के हाथ सौंप गई।

अब तो बहुत ही शीघ्र मातृहीन शिशु ने अपनी कठोरहृदया दीदी का हृदय जीत लिया। हा हा, ही-ही करता हुआ वह शिशु जब अपनी दीदी के ऊपर जा पड़ता और अपने बिना दांत के छोटे से मुख में उसका मुंह, नाक, कान सब कुछ ले जाना चाहता, अपनी छोटी-सी मुट्ठी में उसका जूड़ा पकड़कर जब खींचता और किसी कीमत पर भी हाथों में आई वस्तु को छोड़ने के लिए तैयार न होता, दिवाकर के उदय होने से पहले ही उठकर जब वह गिरता-पड़ता हुआ अपनी दीदी को कोमल स्पर्श से पुलकित करता, किलकारियां मार-मारकर शोर मचाना आरम्भ कर देता, और जब वह क्रमशः दी...दी...दीदी पुकार-पुकारकर बारम्बार उसका ध्यान बंटाने लगा और जब उसने काम-काज और फुर्सत के समय, उस पर उपद्रव करने आरम्भ कर दिए, तब शशि से स्थिर नहीं रहा गया। उसने उस छोटे से स्वतन्त्र प्रेमी अत्याचारी के आगे पूरे तौर पर आत्मसमर्पण कर लिया। बच्चे की मां नहीं थी, इसी से शायद उस पर उसकी सुरक्षा का अधिक भार आ पड़ा।

शिशु का नाम हुआ नीलमणि। जब वह दो वर्ष का हुआ तब उसके पिता असाध्यम रोगी हो गये। बहुत ही शीघ्र चले आने के लिए जयगोपाल बाबू को लिखा गया। जयगोपाल बाबू जब मुश्किल से उस सूचना को पाकर ससुराल पहुँचे, तब श्वसुर कालीप्रसन्न मौत की घड़ियां गिन रहे थे।

मरने से पूर्व कालीप्रसन्न ने अपने एकमात्र नाबालिग पुत्र नीलमणि का सारा भार दामाद जयगोपाल बाबू पर छोड़ दिया और अपनी अचल संपत्ति का एक चौथाई भाग अपनी बेटी शशिकला के नाम कर दिया।

इसलिए चल-अचल संपत्ति की सुरक्षा के लिए जयगोपाल बाबू को आसाम की नौकरी छोड़कर ससुराल चले आना पड़ा।

बहुत दिनों के उपरान्त पति-पत्नी में मिलन हुआ। किसी जड़-पदार्थ के टूट जाने पर, उनके जोड़ों को मिलाकर किसी प्रकार उसे जोड़ा जा सकता है, किन्तु दो मानवी हृदयों को, जहां से फट जाते हैं, विरह की लंबी अवधि बीत जाने पर फिर वहां ठीक पहले

जैसा जोड़ नहीं मिलता? कारण हृदय सजीव पदार्थ है; क्षणों में उसकी परिणति होती है और क्षण में ही परिवर्तन।

इस नए मिलन पर शशि के मन में अबकी बार नए ही भावों का श्रीगणेश हुआ। मानो अपने पति से उसका पुनः विवाह हुआ हो। पहले दाम्पत्य में पुरानी आदतों के कारण जो एक जड़ता-सी आ गई थी, विरह के आकर्षण से वह एकदम टूट गई, और अपने पति को मानो उसने पहले की अपेक्षा कहीं अधिक पूर्णता के साथ पा लिया। मन-ही-मन में उसने संकल्प किया कि चाहे कैसे ही दिन बीतें, वह पति के प्रति उद्दीप्त स्नेह की उज्ज्वलता को तनिक भी म्लान न होने देगी।

किन्तु इस नए मिलन में जयगोपाल बाबू के मन की दशा कुछ और ही हो गई। इससे पूर्व जब दोनों अविच्छेद रूप से एक साथ रहा करते थे, जब पत्नी के साथ उसके पूरे स्वार्थ और विभिन्न कार्यों में एकता का संबंध था, जब पत्नी के साथ उसके जीवन का एक नित्य सत्य हो रही थी और जब वह उसे पृथक् करके कुछ करना चाहते थे तो दैनिकचर्या की राह में चलते-चलते अवश्य उनका पांव अकस्मात् गहरे गर्त में पड़ जाता। उदाहरणतः कहा जा सकता है कि परदेश जाकर पहले-पहल वह भारी मुसीबत का शिकार हो गये। वहां उन्हें ऐसा प्रतीत होने लगा, मानो अकस्मात् उन्हें किसी ने गहरे जल में धक्का दे दिया है। लेकिन क्रमशः उनके उस विच्छेद में नए कार्य को थेकली लगा दी गई।

केवल इतना ही नहीं; अपितु पहले जो उनके दिन व्यर्थ आलस्य में कट जाए करते थे, उधर दो वर्ष से अपनी आर्थिक अवस्था सुधरने की कोशिश के रूप में उनके मन में एक प्रकार की जबर्दस्त क्रांति का उदय हुआ। उनके मन के सम्मुख मालदार बनने की एकनिष्ठ इच्छा के सिवा और कोई चीज नहीं थी। इस नए उन्माद की तीव्रता के आगे पिछला जीवन उनको बिल्कुल ही सारहीन-सा दृष्टिगत होने लगा।

नारी जाति की प्रकृति में खास परिवर्तन ले आता है स्नेह, और पुरुष जाति की प्रकृति में कोई खास परिवर्तन होता है, तो उसकी जड़ में रहती है कोई-न-कोई दुष्ट-प्रवृत्ति।

जयगोपाल बाबू दो वर्ष पश्चात् आकर पत्नी से मिले तो उन्हें हू-ब-हू पहली-सी पत्नी नहीं मिली। उनकी पत्नी शशि के जीवन में उनके नवजात साले ने एक नई ही परिधि स्थित कर दी है, जो पहले से भी कहीं अधिक विस्तृत और संकीर्णता से कोसों दूर है। शशि के मन के इस भाव से वह बिल्कुल ही अनभिज्ञ थे और न इससे उनका मेल ही बैठता था। शशि अपने इस नवजात शिशु के स्नेह में से पति को भाग देने का बहुत यत्न करती, पर उसमें इसे सफलता मिली या नहीं, कहना कठिन है।

शशि नीलमणि को गोदी में उठाकर हंसती हुई पति के सामने आती और उनकी गोद में देने की चेष्टा करती, किन्तु नीलमणि पूरी ताकत के साथ दीदी के गले से चिपट जाता और अपने

सम्बन्ध की तनिक भी परवाह न करके दीदी के कन्धे से मुंह को छिपाने का प्रयत्न करता।

शशि की इच्छा थी कि उसके इस छोटे से भाई को मन बहलाने की जितनी ही प्रकार की विद्या आती है, सबकी सब बहनोई के आगे प्रकट हो जाएं। लेकिन न तो बहनोई ने ही इस विषय में कोई आग्रह दिखाया और न साले ने ही कोई दिलचस्पी दिखाई। जयगोपाल बाबू की समझ में यह बिल्कुल न आया कि इस दुबले-पतले चौड़े माथे वाले मनहूस सूरत काले-कलूटे बच्चे में ऐसा कौन-सा आकर्षण है, जिसके लिए उस पर प्यार की इतनी फिजूलखर्ची की जा रही है।

प्यार की सूक्ष्म से सूक्ष्म बातें नारी-जाति चट से समझ जाती है। शशि तुरन्त ही समझ गई कि जयगोपाल बाबू को नीलमणि के प्रति कोई खास रुचि नहीं है और वह शायद मन से उसे चाहते भी नहीं हैं। तब से वह अपने भाई को बड़ी सतर्कता से पति की दृष्टि से बचाकर रखने लगी। जहां तक हो सकता, जयगोपाल की विराग दृष्टि उस पर नहीं पड़ने पाती।

और इस प्रकार वह बच्चा उस अकेली का एकमात्र स्नेह का आधार बन गया। उसकी वह इस प्रकार देखभाल रखने लगी, जैसे वह उसका बड़े यत्न से इकट्ठा किया हुआ गुप्त धन है। सभी जानते हैं कि स्नेह जितना ही गुप्त और जितना ही एकान्त का होता, उतना ही तेज हुआ करता है।

नीलमणि जब कभी रोता तो जयगोपाल बाबू को बहुत ही झुंझलाहट आती। अतः शशि झट से उसे छाती से लगाकर खूब प्यार कर-करके हंसाने का प्रयत्न करती; खासकर रात को उसके रोने से यदि पति की नींद उचटने की सम्भावना होती और पति यदि उस रोते हुए शिशू के प्रति हिंसात्मक भाव से क्रोध या घृणा जाहिर करता हुआ तीव्र स्वर में चिल्ला उठता, तब शशि मानो अपराधिनी-सी संकुचित और अस्थिर हो जाती और उसी क्षण उसे गोदी में लेकर दूर जाकर प्यार के स्वर में कहती- 'सो जा मेरा राजा बाबू, सो जा' वह सो जाता।

बच्चों-बच्चों में बहुधा किसी-न-किसी बात पर झगड़ा हो ही जाता है? शुरू-शुरू में ऐसे अवसरों पर शशि अपने भाई का पक्ष लिया करती थी; कारण उसकी मां नहीं है। जब न्यायाधीश के साथ-साथ न्याय में भी अन्तर आने लगा तब हमेशा ही निर्दोष नीलमणि को कड़ा-से-कड़ा दण्ड भुगतना पड़ता। यह अन्याय शशि के हृदय में तीर के समान चुभ जाता और इसके लिए वह दण्डित भाई को अलग ले जाकर, उसे मिठाई देकर खिलौने देकर, गाल चूम करके, दिलासा देने का प्रयत्न किया करती।

परिणाम यह देखने में आता है कि शशि नीलमणि को जितना ही अधिक चाहती, जयगोपाल बाबू उतना ही उस पर जलते-भुनते

रहते और वह जितना ही नीलमणि से घृणा करते, गुस्सा करते शशि उतना ही उसे अधिक प्यार करती।

जयगोपाल बाबू उन इंसानों में से हैं जो कि अपनी पत्नी के साथ कठोर व्यवहार नहीं करते और शशि भी उन स्त्रियों में से है जो स्निग्ध स्नेह के साथ चुपचाप पति की बराबर सेवा किया करती है। किन्तु अब केवल नीलमणि को लेकर अन्दर-ही-अन्दर एक गुठली-सी पकने लगी जो उस दम्पति के लिए व्यथा दे रही है।

इस प्रकार के नीरव द्वन्द्व का गोपनीय आघात-प्रतिघात प्रकट संघर्ष की अपेक्षा कहीं अधिक कष्टदायक होता है, यह बात उन समवयस्कों से छिपाना कठिन है जो कि विवाहित दुनिया की सैर कर चुके हों।

3

नीलमणि की सारी देह में केवल सिर ही सबसे बड़ा था। देखने में ऐसा प्रतीत होता जैसे विधाता ने एक खोखले पतले बांस में फूंक मारकर ऊपर के हिस्से पर एक हंडिया बना दी है। डॉक्टर भी अक्सर भय प्रगट करते हुए कहा करते कि लड़का उस ढांचे के समान ही निकम्मा साबित हो सकता है। बहुत दिनों तक उसे बात करना और चलना नहीं आया। उसके उदासीन गम्भीर चेहरे को देखकर ऐसा प्रतीत होता कि उसके माता-पिता अपनी

वृद्धावस्था की सारी चिन्ताओं का भार, इसी नन्हे-से बच्चे के माथे पर लाद गये हैं।

दीदी के यत्न और सेवा से नीलमणि ने अपने भय का समय पार करके छठे वर्ष में पदार्पण किया।

कार्तिक में भइया-दूज के दिन शशि ने नीलमणि को नए-नए, बढ़िया वस्त्र पहनाये, खूब सजधज के साथ बाबू बनाया और उसके विशाल माथे पर टीका करने के लिए थाली सजाई। भइया को पटड़े पर बिठाकर अंगूठे में रोली लगाकर टीका लगा ही रही थी कि इतने में पूर्वोक्त मुंहफट पड़ोसिन तारा आ पहुंची और आने के साथ ही बात-ही-बात में शशि के साथ संघर्ष आरम्भ कर दिया।

वह कहने लगी- "हाय, हाय! छिपे-छिपे भइया का सत्यानाश करके ठाट-बाट से लोक दिखाऊ टीका करने से क्या फायदा?"

सुनकर शशि पर एक साथ आश्चर्य, क्रोध और वेदना की दामिनी-सी टूट पड़ी। अन्त में उसे सुनना पड़ा कि वे दोनों औरत-मर्द मिलकर सलाह करके नाबालिग नीलमणि की अचल संपत्ति को मालगुजारी-वसूली में नीलाम करवाकर पति के फुफेरे भाई के नाम खरीदने के साजिश कर रहे हैं।

शशि ने सुनकर कोसना शुरू किया- "जो लोग इतनी बड़ी झूठी बदनामी कर रहे हैं, भगवान करे उनकी जीभ जल जाए।" और अश्रु बहाती हुई सीधी वह पति के पास पहुंची तथा उनसे सब बात कह सुनाई।

जयगोपाल बाबू ने कहा- "आजकल के जमाने में किसी का भरोसा नहीं किया जा सकता। उपेन्द्र मेरा सगा फुफेरा भाई है, उस पर सारी अचल संपत्ति का भार डालकर मैं निश्चिंत था। उसने कब मालगुजारी नहीं भरी और कब नीलाम में हासिलपुर खरीद लिया, मुझे कुछ पता ही नहीं लगा।"

शशि ने आश्चर्य के साथ पूछा- "तुम नालिश नहीं करोगे?"

जयगोपाल बाबू ने कहा- "भाई के नाम नालिश कैसे करूं और फिर नालिश करने से कुछ फल भी नहीं निकलेगा, गांठ से और रुपये-पैसे की बर्बादी होगी?"

पति की बात पर भरोसा करना शशि का कर्तव्य है किन्तु वह किसी भी तरह भरोसा न कर सकी? तब फिर उसकी अपनी सुख की घर-गृहस्थी और स्नेह का दाम्पत्य जीवन सब-कुछ सहसा भयानक रूप में उसके समक्ष आ खड़ा हुआ। जिस घर-द्वार को वह अपना आश्रय समझ रही थी, अचानक देखा कि उसके लिए वह एक निष्ठुर फांसी बन गया है, जिसने चारों ओर

से उन दोनों बहन-भाई को घेर रखा है। वह अकेली अबला है, असहाय नीलमणि को कैसे बचाये, उसकी कुछ समझ में नहीं आता। जैसे-जैसे वह सोचने लगी। वैसे-वैसे भय और घृणा से संकट में पड़े हुए अबोध भाई पर उसका प्यार बढ़ता ही गया। उसका हृदय ममता और आंखें अश्रुओं से भर आईं। वह सोचने लगी यदि उसे उपाय मालूम होता तो वह लाट साहब के दरबार में अपनी अर्जी दिलवाती और वहां से भी कुछ न होता तो महारानी विक्टोरिया के पास खत भेजकर अपने भाई की जायदाद अवश्य बचा लेती और महारानी साहिबा नीलमणि की वार्षिक सात सौ अठ्ठावन रुपये लाभ की जायदाद हासिलपुर कदापि नहीं बिकने देती।

इस प्रकार शशि जबकि सीधा महारानी विक्टोरिया के दरबार में न्याय कराके अपने फुफेरे देवर को ठीक करने का उपाय सोच रही थी, तब सहसा नीलमणि को तीव्र ज्वर चढ़ आया और ऐसा दौरा पड़ने लगा कि हाथ-पांव तन गये और बारम्बार बेहोशी बढ़ने लगी।

जयगोपाल ने गांव के एक देशी काले डॉक्टर को बुलवाया। शशि ने अच्छे डॉक्टर के लिए प्रार्थना की तो जयगोपाल बाबू ने उत्तर दिया- "क्यों? मोतीलाल क्या बुरा डॉक्टर है?"

शशि जब उनके पांवों पर गिर गई, अपनी सौगंध खिलाकर भयभीत हिरनी की तरह निहारने लगी, तब जयगोपाल बाबू ने कहा- "अच्छा, शहर से डॉक्टर बुलवाता हूं, ठहरो।"

शशि नीलमणि को छाती से चिपकाये पड़ी रही। नीलमणि भी एक पल के लिए भी उसे आंखों से ओझल नहीं होने देता; भय खाता कि उसे धोखा देकर दीदी उसकी कहीं चली जाए और इसलिए वह सदा उससे चिपटा रहता; यहां तक कि सो जाने पर भी पल्लू कदापि नहीं छोड़ता।

सारा दिन इसी प्रकार बीत गया। संध्या के बाद दीया-बत्ती के समय जयगोपाल बाबू ने आकर कहा- "शहर का डॉक्टर नहीं मिला, वह दूर कहीं मरीज देखने गया है।" और इसके साथ ही यह भी कहा- "मुकदमे के कारण मुझे अभी इसी समय बाहर जाना पड़ रहा है। मैंने मोतीलाल से कह दिया है, दोनों वक्त आकर, अच्छी प्रकार से देखभाल किया करेंगे।"

रात को नीलमणि अंतसंत बकने लगा। भोर होते ही शशि और कुछ भी न सोचकर खुद रोगी भाई को लेकर नाव में बैठ कलकत्ता के लिए चल दी।

कलकत्ता जाकर देखा कि डॉक्टर घर पर ही हैं; कहीं बाहर नहीं गये हैं। भले घर की स्त्री समझकर डॉक्टर ने झटपट उसके लिए

ठहरने का प्रबन्ध कर लिया और उसकी मदद के लिए एक अधेड़ विधवा को नियुक्त कर दिया। नीलमणि का इलाज चलने लगा।

दूसरे ही दिन जयगोपाल बाबू भी कलकत्ता आ धमके। मारे गुस्से के आग-बबूला होकर उसने शशि को तत्काल ही घर लौटने का हुक्म दिया।

शशि ने कहा- 'मुझे यदि तुम काट भी डालो, तब भी मैं अभी घर नहीं लौटने की। तुम सब मिलकर मेरे नीलमणि को मार डालना चाहते हो। उसके बाप नहीं, मां नहीं, मेरे सिवा उसका है ही कौन? मैं उसे बचाऊंगी, बचाऊंगी, अवश्य बचाऊंगी।'

जयगोपाल बाबू भावावेश में आकर बोले-"तो तुम यहीं रहो, मेरे घर अब कदापि मत आना।"

शशि ने उसी क्षण तपाक से कहा-"तुम्हारा घर कहां से आया? घर तो मेरे भाई का है।"

जयगोपाल बाबू बोले- "अच्छा देखा जाएगा।"

कुछ दिनों तक इस घटना को लेकर मोहल्ले के लोगों में चुहलबाजियां चलती रहीं, अनेक वाद-विवाद होते रहे। तभी पड़ोसिन तारा ने कहा- "अरे! खसम के साथ लड़ना ही हो तो घर पर रहकर लड़ो न, जितना लड़ना हो। घर छोड़कर बाहर लड़ने-झगड़ने की क्या जरूरत, कुछ भी हो, आखिर है तो अपना घरवाला ही?"

हाथ में जो कुछ जमा-पूंजी थी सब खर्च करके, आभूषण आदि जो कुछ भी थे सब बेचकर किसी प्रकार शशि ने अपने नाबालिग भाई को मौत के मुंह से निकाल लिया? और तब उसे पता लगा कि दुआर-गांव में उन लोगों की जो बड़ी भारी खेती की जमीन थी और उस पर उनकी पक्की हवेली भी थी, जिसकी वार्षिक आय लगभग डेढ़ सहस्र थी। वह भी जमींदार के साथ मिलकर जयगोपाल बाबू ने अपने नाम करा ली है। अब सारी अचल संपत्ति उसके पति की है, भाई का उसमें कुछ भी हक नहीं रहा है।

रोग से छुटकारा मिलने पर नीलमणि ने करुण स्वर में कहा- "दीदी! घर चलो।" वहां अपने साथियों से खेलने के लिए उसका जी मचल रहा है। इसी से प्रेरित होकर वह बार-बार कहने लगा- "दीदी! अपने उसी घर में चलो न।"

सुनकर शशि रोने लगी, बोली- "हम लोगों का अब घर कहां है?"

लेकिन, केवल रोने से ही फल क्या? अब दीदी के सिवा इस दुनिया में उसके भाई का है ही कौन? यह सोचकर शशि ने आंखें पोंछ डालीं और साहस बटोरकर डिप्टी-मजिस्ट्रेट तारिणी बाबू के घर जाकर, उसकी पत्नी की शरण ली।

मजिस्ट्रेट साहब जयगोपाल बाबू को भली-भांति जानते थे। भले घर की बहू-बेटी घर से निकलकर जमीन-जायदाद के लिए पति से झगड़ना चाहती है, इस बात पर वे शशि पर गुस्सा हुए। उसे बातों से फुसलाये रखकर उसी समय उन्होंने जयगोपाल बाबू को पत्र लिखा। जयगोपाल बाबू साले सहित शशि को जबर्दस्ती नाव पर बैठकर गांव ले गया।

इस दम्पति का द्वितीय विच्छेद के बाद, फिर वह द्वितीय मिलन हुआ। जन्म-जन्म का साथ सृष्टिकर्ता का विधान जो ठहरा।

बहुत दिनों बाद घर लौटकर पुराने साथियों को पाकर नीलमणि बहुत खुश हुआ आनन्दपूर्वक घूमने-फिरने लगा। उसकी निश्चित खुशी को देखकर भीतर-ही-भीतर शशि की छाती फटने लगी।

शरद ऋतु आई। मजिस्ट्रेट साहब गांवों में छानबीन करने दौरे पर निकले और शिकार करने के लिए, जंगल से सटे हुए एक गांव में तम्बू तन गये। गांव के मार्ग में साहब के साथ नीलमणि की भेंट हुई। उसके सभी साथी साहब को देखकर दूर हट गये। निरीक्षण करता रहा। न जाने साहब को उससे कुछ दिलचस्पी हुई, उसने पास बुलाकर पूछा- "तुम स्कूल में पढ़ते हो?"

बालक ने चुपचाप खड़े रहकर सिर हिला दिया- "हां।"

साहब ने पुनः पूछा- "कौन-सी पुस्तक पढ़ते हो?"

नीलमणि 'पुस्तक' शब्द का मतलब न समझ सका, अतः साहब के मुंह की ओर देखता रहा।

घर पहुंचकर नीलमणि ने साहब के साथ अपने इस परिचय की बात खूब उत्साह के साथ दीदी को बताई।

दोपहर को अचकन, पाजामा, पगड़ी आदि बांधकर जयगोपाल बाबू साहब का अभिवादन करने के लिए पहुँचे। साहब उस समय तम्बू के बाहर खुली छाया में कैम्प मेज लगाये बैठे थे। सिपाही वगैरा की चारों ओर धूम मची हुई थी। उन्होंने जयगोपाल बाबू को चौकी पर बैठाकर गांव के हालचाल पूछे। जयगोपाल बाबू सर्वसाधारण गांव वालों के सामने जो इस प्रकार बड़प्पन

का स्थान घेरे बैठा है, इसके लिए वह मन-ही-मन फूला नहीं समा रहा है उसके मन में बार-बार यह विचार उठ रहे थे कि इस समय चक्रवर्ती और नन्दी घराने का कोई आकर देख जाता तो, कितना अच्छा होता?

इतने में नीलमणि को साथ लिये अवगुण्ठन ताने एक स्त्री सीधी साहब के सामने आकर खड़ी हो गई, बोली- "साहब आपके हाथ में मैं इस अनाथ भाई को सौंप रही हूं, आप इसकी रक्षा कीजिए।"

साहब पूर्व परिचित गम्भीर प्रकृति वाले बालक को देखकर उसके साथ वाली स्त्री को भले घर की बहू-बेटी समझ कर, उसी क्षण उठ के खड़े हो गये, बोले- "आप तम्बू में आइये।"

"मुझे जो कुछ कहना है, वह यहीं कहूंगी।"

जयगोपाल बाबू का चेहरा फीका पड़ गया और घबराहट के मारे ऐसा हो गया, मानो अंगारे पर अचानक उसका पांव पड़ गया हो। गांव के लोग तमाशा देखने के लिए खिसक-खिसककर पास आने की चेष्टा करने लगे। तभी साहब ने बेंत उठाया और सब भाग खड़े हुए।

तब फिर शशिकला ने अपने अनाथ भाई का हाथ थामते हुए उस अनाथ बच्चे का सारा इतिहास शुरू से आखिर तक कह सुनाया। जयगोपाल बाबू ने बीच-बीच में रुकावट डालने की चेष्टा की, पर साहब ने गरजकर उसे जहां का तहां बैठा दिया। "चुप रहो।" और बेंत के संकेत से उसे चौकी से उठाकर सामने खड़ा होने का हुक्म दिया।

जयगोपाल बाबू शशि को मन-ही-मन कोसता हुआ सामने खड़ा रहा और नीलमणि अपनी दीदी से बिल्कुल चिपटकर मुंह बनाये चुपचाप खड़ा सुनता रहा।

शशि की बात सुन लेने पर साहब ने जयगोपाल बाबू से कई प्रश्न पूछे और उनका उत्तर पाकर, बहुत देर तक चुप रहकर शशि को सम्बोधित करके बोले-"बेटी! यह मामला मेरी कचहरी में नहीं चल सकता, पर तुम बेफिक्र रहो, इस विषय में मुझे जो कुछ करना होगा, अवश्य करूंगा। तुम इस अनाथ भाई को लेकर बेधकड़क घर जा सकती हो।"

शशि ने कहा- "साहब जब तक इस अनाथ को अपना मकान नहीं मिल सकता तब तक इसे लेकर घर जाने का साहस मैं नहीं कर सकती। अब, यदि आप इसे अपने पास नहीं रखते तो और कोई भी इस अनाथ की रक्षा नहीं कर सकता?"

साहब ने पूछा- "तुम कहां जाओगी?"

शशि ने उत्तर दिया- "मैं अपने पति के घर लौट जाऊंगी, मेरी कुछ फिक्र नहीं है।" साहब मुस्कराया और ताबीज बंधे और दुबले-पतले, गंभीर स्वभाव वाले काले रंग के उस दुखी अनाथ बालक को अपने पास रखने को तैयार हो गया।

इसके उपरान्त शशि जब विदा होने लगी, तब बालक ने उसकी धोती का छोर पकड़ लिया।

साहब ने कहा- "बेटा! तुम डरो मत, आओ, मेरे पास आओ।"

अवगुण्ठन के भीतर अश्रुओं से झरना बहाते और पोंछते हुए अनाथ की दीदी ने कहा- "मेरा राजा भैया है न, जा, जा, साहब के पास जा-तेरी दीदी तुझसे फिर मिलेगी, अच्छा।"

इतना कहकर उसने नीलमणि को उठा छाती से लगा लिया, और माथे पर, पीठ पर हाथ फेरकर किसी प्रकार उसके पतले हाथों से अपनी धोती का छोर छुड़ाया और बड़ी तेजी से वहां से चल दी। साहब ने तुरंत ही बाएं हाथ से उस अनाथ बालक को रोक लिया और बालक- 'दीदी! दीदी!' चिल्लाता हुआ जोर-जोर से रोने लगा। शशि ने एक बार मुड़कर, दूर से अपना दाहिना हाथ उठाकर, अपनी ओर से उसे चुप होने के लिए सांत्वना दी और

अपने टूक-टूक हुए हृदय को लेकर और भी तेजी से आगे निकल गई।

फिर बहुत दिनों तक उस पुरानी हवेली में पति-पत्नी का मिलन हुआ। सृष्टिकर्ता का विधान जो ठहरा।

लेकिन यह मिलन अधिक दिन तक न रह सका। कारण, इसके कुछ ही दिन बाद, एक दिन भोर होते ही गांव वालों ने सुना कि रात को जयगोपाल बाबू की स्त्री हैजे से मर गई और रात ही को उसका अन्तिम संस्कार हो गया।

विदा के समय शशि अपने अनाथ भाई को वचन दे आई थी कि उसकी दीदी उससे फिर मिलेगी, पता नहीं उस वचन को वह निभा सकी अथवा नहीं।